P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-I* ISSUE- VIII* November- 2016
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा–साहित्य का कला और विज्ञान की दिशा में योगदान

आर0 के0 राय
प्राचार्य,
भूगोल विभाग,
एस0 एम0 सी0 एल0 काका
पी0 जी0 गर्ल्स कालेज,
खत्रीवाड़ा, सिकन्द्राबाद
बुलन्दशहर

सारांश

मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाओं में मूलतः पालि, अर्धमागधी, जैन महाराश्ट्रीय, जैन शौरसेनी, अपभ्रंश, पैशाची, महाराष्ट्रीय, मागधी, अभिलेखीय प्राकृत आदि भाषाऐं आती है। भारतीय संस्कृति के विकास के विभिन्न क्षेत्रों में इनका योगदान सराहनीय है, लेकिन सामान्य भारतीय संस्कृति पर मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाओं के सांस्कृतिक योगदान का चित्र तब तक पूरा नहीं माना जाना चाहिए जब तक हम सत्रह शताब्दियों के दौरान गौतमबुद्ध और महावीर के प्रादुर्भाव काल से भारत के सांस्कृतिक जीवन पर पड़े उनके प्रभाव के प्रकार एवं योगदान की विविधता को ध्यान में न रखे। यह कभी सोचा भी नहीं जा सकता कि इन केवल मध्यमालीन आर्य भाशाओं ने इस समूची अवधि में मौलिक श्रेणी की सांस्कृतिक,राजनीतिक और धार्मिक उपलब्धियों के लिए इतना योगदान किया क्योंकि जब धार्मिक और सामाजिक सुधारों को जन सामान्य तक पहुँचाने और अभिलेखों के द्वारा उन्हें उद्घोषित करने के लिए अभिव्यक्ति के सामान्य माध्यम के रूप में मध्यकालीन आर्य भाषाओं को आवश्यक बना दिया गया, प्राचीन भारतीय आर्य भाषाओं की सामान्य पृष्ठभूमि का (जिसका प्रतिनिधित्व लौकिक संस्कृत करती थी) अपरिहार्य प्रभाव शिष्टजनों पर बना रहा। यद्यपि उसमें अस्थायी ह्रास देखने में आता रहा, फिर भी उसने भव्य गुप्तयुग के दौरान साहित्य के प्रत्येक क्षेत्र में कुछ समय के लिए पुनः महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया। इस प्रकार बौद्ध एवं जैन धर्म के विधान की प्रथम छः सदियों के बीच भारतीयशड्दर्शन को सूत्र रूप में उपनिषद्ध करके पुनरूज्जीवित किया गया। इसी प्रकार गद्य में निबद्ध संस्कृत साहित्य के उत्कृष्ट ग्रन्थ तथा संस्कृत व्याकरण का सबसे बड़ा प्रमाण ग्रन्थ पतंजलि का ''महाभाष्य'' ईसा पूर्व द्वितीय सदी में रचे गये। यद्यपि आरंभिक ईसवी सदियों के कवियों एवं नाटककारों का काल अभी विवादग्रस्त है, फिर भी अश्वघोष को प्रथम ईसवीं सदी में निश्चित रूप से रखा जा सकता है। इस प्रकार, हमें वैदिक युग से लेकर प्राचीन भारतीय आर्य भाषाओं के साहित्यिक क्रिया–कलापों की निरन्तरता देखने को मिलती है, जो कि सदियों के बीतने के साथ–साथ क्रमशः विकसित होती चल रही थी और फिर से किसी एक शतक या एक राज्य में तीव्रगति से प्रगति कर रही थी तथा जिसके विकास की प्रक्रिया में कभी मन्दता और कभी वेग के रूप में घट–बढ़ देखने में आती थी। अतः मूल बात यहाँ यह है कि मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा साहित्य किस रूप में विकसित हुआ है, किस काल में वह अत्यधिक शक्तिशाली रहा है तथा उस साहित्य ने कला और विज्ञान की दिशा में एवं साहित्य के सांस्कृतिक जीवन के सामान्य निर्माण में कितना मौलिक योगदान किया है।

मुख्य शब्द : आर्य भाषा,मध्यकालीन भारत,भारतीय संस्कृति

प्रस्तावना

ब्राह्मी और खरोष्ठी लिपि को बाँचने और उसकी व्याख्या प्रस्तुत करने में मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा का अनुस्मरण भी बड़ा रोचक है। अफगानिस्तान और पंजाब के एक भाग पर ईसा पूर्व द्वितीय सदी से ईसा पूर्व 25 साल तक शासन करने वाले यूनानी राजकुमारों द्वारा ढलवाये द्विभाषी सिक्कों से गूढ़ाक्षर वाचन का संकेत मिला था। इन सिक्कों के चेहरों पर नियमित रूप से एक यूनानी आख्यान अंकित होता था, जिसका अनुवाद सिक्कों के दूसरे पहलू पर मध्यकालीन आर्य और भारतीय रूप में लिखित राजाओं ने नामों का उनके यूनानी समानार्थकों के साथ पहचान लिया जाना इन वर्ण मालाओं के पढ़े जाने की दिशा में पहला कदम था। इस तरह क्रमशः जो संकेत मिलते गये उन्होंने सिक्कों पर अंकित भारतीय पदवियों की व्याख्या का उनके यूनानी

समानार्थकों के साथ मार्ग प्रशस्त कर दिया तथा प्रस्तरों एवं ताम्र पत्रों पर खुदे हुए भारत के अनेक भागों में प्राप्त लम्बे अभिलेखों के वाचन का काम अनेक वर्शो के धैर्यपूर्ण प्रयत्नों और शोधों ने सरल कर दिया। इस प्रकार, यद्यपि लिपियाँ निश्चित रूप से मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा से सम्बद्ध नहीं थी, फिर भी सिक्कों पर अंकित मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाके आख्यानों ने इन लिपियों के मूल्य को सिद्ध कर दिया। प्राचीन भारत के इतिहास के पुननिर्माण के लिए जिन स्त्रोतों से सामग्री प्राप्त होती है, मूल स्त्रोतों पर यदि ध्यान दिया जाये,वे संख्या में तीन प्रकार के हैं–

1. ब्राह्मणों, जैनों और बौद्धों का साहित्य।
2. प्रस्तरों और ताम्र पत्रों पर उत्कीर्ण लेख, सिक्कें,मुहर।
3. विदेशी लेखकों के विवरण जिनमें यूनानी, लातीनी और चीनी प्रमुख थे।

इनमें से बौद्धों और जैनियों का साहित्य मुख्यतः मध्यकालीन भारतीय आर्य बोलियों में मिलता है। ईसा पूर्व चतुर्थ सदी से ईसा पूर्व के बाद चौथे सदी तक प्रमुख अभिलेखों और सिक्कों पर समान रूप से मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाओं का प्रयोग देखने में आता है। वैसे आज ऐतिहासिक भारत के पुर्ननिर्माण के संबंध में प्राचीन भारतीय आर्य भाषा की सामान्यतः स्वीकृत महत्वपूर्ण स्थिति के बारे में कोई भी विवाद प्रस्तुत नहीं करता, परन्तु जब तथा कथित ऐतिहासिक युग में प्रवेश करते हैं, जिसका आरम्भ बुद्ध और महावीर के धर्म विधानों से होता है तो उक्त स्थिति को चुनौती देने की पूरी संभावना उठ खड़ी होती है। यद्यपि हाल के अनुसंधान परम्परागत इतिहास के लिये पुराणों की स्थिति को एक अच्छे स्त्रोत के रूप में महत्व देते हैं फिर भी उन्होंने असंदिग्ध रूप से यह सिद्ध कर दिया है कि मध्यकालीन आर्य भाषा स्त्रोतों पर आधारित समानान्तर साक्ष्य जो बौद्ध एवं जैन ग्रन्थों में उपलब्ध है, प्राप्त परिणामों के परीक्षण और रूपान्तर विधान के लिए प्रथम श्रेणी का हैं। वस्तुतः एक समय तो आरम्भिक भारतीय साहित्य के पुनर्निर्माण के लिए बौद्ध स्त्रोंतों पर अत्यधिक विश्वास करने का फैशन हो गया था। यद्यपि वह स्थिति अधिक समय तक मान्य न रही, फिर भी भारत के महान अतीत के मूल्यांकन के लिए विशेषतः ऐतिहासिक युग के आरम्भ के दौरान मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा साहित्य का महत्व आज भी स्वीकार किया जाता है।

यह स्पष्ट है कि मध्यकालीन भारतीय आर्य अपनी भाषागत सामग्री में अत्यन्त समृद्ध है। वस्तुतः ईसा पूर्व तृतीय शताब्दी ईसवीं चतुर्थ सदी तक साहित्यिक प्राकृतों के विशाल भाग को ध्यान में भी न रखें, फिर भी समृद्ध अभिलेखीय सामग्री के संबंध में भारत के आरम्भिक ऐतिहासिक काल की देशी बोलियों का अच्छा चित्र मिल जाता है।यद्यपि इस काल में प्राचीन भारतीय आर्य भाषा का सामान्य रूप से प्रतिनिधित्व लौकिंक संस्कृत के द्वारा किया जा रहा था, जो कि पहले से ही रूढ़ हो चुकी थी, फिर भी हम यह पाते हैं कि भारतीय आर्य बोलियों के तुलनात्मक अध्ययन के लिए मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा एक सुदृढ़ आधार प्रस्तुत करती है। इन प्रमुख स्त्रोतों में समस्त भारत उपमहाद्वीप पर विकीर्ण अशोक के सम–सामयिक अभिलेख है जो विभिन्न भागों में व्यवहृत भाषाई विभिन्नता का अच्छा चित्र प्रस्तुत करते हैं। अपने विस्तार विविधता और सामान्य अर्न्तवस्तु के कारण ये अभिलेख मध्यकालीन भारतीय आर्य बोली विज्ञापन की समृद्धि को समझने में हमें केवल अत्यधिक उपयोगी भाषा संबंधी साहाय्य ही नहीं प्रदान करते, बल्कि अषोक काल के सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक चित्रों को हमारी आँखों के सामने लाने का काम भी करते है। कुछ उल्लेखनीय उदाहरणों को छोड़कर मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा के परवर्ती अभिलेख अधिकतर छोटी समर्पणात्मक पंक्तियों है और यदि भाषा की दृष्टि से देखा जाये तो कुछ सीमित क्षेत्रों को छोड़कर मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा के पुनर्निर्माण के लिए कम सामग्री प्रस्तुत करते है।

दूसरी ओर बौद्ध एवं जैन धर्म के समृद्ध धार्मिक साहित्य ने हमें अभिलेखीय प्राकृत चित्रों के अन्तराल को भरने के लिए पर्याप्त भाषा संबंधी सामग्री प्रदान की है, यद्यपि यह बहुत कुछ रूढ़ रूप में अंकित है, पर भाषागत मूल्य से कहीं बढ़कर उनकी अर्न्तवस्तु की समृद्धि है जो कमोबेश रूप में उस युग का सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक चित्र प्रस्तुत करती है जो सभ्यता के लिए अपने सामान्य योगदान में विशेष मूल्य रखता हैं। लंका में पालि वाड्मय के प्रसार का परिणाम यह हुआ कि उस क्षेत्र में एक भारतीय आर्य भाषा प्रविष्ट हो गई और अशोक के समय या उसके कुछ बाद से ब्राह्मी लिपि में उत्कीर्ण अभिलेख और एक भारतीय प्राकृत समूचे द्वीप में अच्छी तरह से फैले पाये जाते है। प्राचीन और आधुनिक सिंहली इसी आरम्भिक प्राकृत से निकली है जो कि दक्षिणी बौद्ध साहित्य की मिश्र पालि से अत्यधिक प्रभावित है। इस तरह धार्मिक और भाषा वैज्ञानिक दोनों दृष्टियों से मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा इस महान द्वीप पर छा गई थी, जिसे भारत का ही एक भाग समझा जाना चाहिए जो कि शक्तिशाली तथा पूर्णतया विकसित एक भारतीय भाषा वर्ग अर्थात् द्रविड़ भाषा परिवार के द्वारा भारतीय आर्य भाषा परिवार से अलग कर दिया था। यद्यपि पालि तिपिटक, वर्मा और स्याम पहुँचा, जो उसने मूलतः उन देशों की संस्कृति को प्रभावित किया। इस सांस्कृतिक प्रभाव के अवशेष उचित रूप से उस आर्य भावित क्षेत्र में अब भी पाये जाते है।

उसी प्रकार हम भारतीय प्राकृतिक सीमाओं के बाहर बौद्ध संस्कृत ग्रन्थों का प्रसार देखते है जो मूल ग्रन्थों के चीनी या तिब्बती पाठान्तरों को या तो लिप्यन्तरण या अनुवाद में प्रस्तुत करते हैं। यद्यपि बौद्ध, संस्कृत एक मिश्रित बोली के रूप में प्रस्तुत की गई है, फिर भी मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा के ही अन्तर्गत आती है परन्तु खोतान में या उसके निकटवर्ती क्षेत्रों अथवा चीनी, तुर्किस्तान में पाये गये 'धम्म पद' के खरोष्ठी रूपान्तर तथा खरोष्ठी दस्तावेज सम–सामयिक दृष्टि से दिलचस्प है। उनसे यह विदित होता है कि मध्यकालीन भारतीय आर्य ने केवल प्रसिद्ध 'धम्म पद' का विशेष पाठान्तर प्रस्तुत करने के लिए उत्तर–पश्चिमी इलाके में फली–फूली बल्कि आरम्भिक सदियों में उसका एक राजकीय भाषा के रूप में मध्य एशियाई क्षेत्रों में भी

विस्तार हुआ। यह विस्तार मुख्यतः बौद्ध संगीतियों के कारण हुआ है ऐसी मान्यता है।

संभवतः पालि और अर्द्धमागधी साहित्य में मानवता के दो महान शिक्षक बुद्ध और महावीर की दार्शनिक,धार्मिक और नैतिक शिक्षाऐं समाविष्ट है। केन्द्रीय नैतिक प्रत्यय जिसे इन दोनों धर्मो ने महत्वपूर्ण माना और जिसकी राष्ट्रीय चेतना पर मुहर लगा दी, वह अहिंसा का सिद्धान्त था, जो अहिंसा स्थूल और सूक्ष्म या भौतिक/अभौतिक दोनों हो सकती है। बुद्ध और महावीर की सीधी शिक्षा का अधिक प्रत्यक्ष परिणाम है जो आरम्भ में मध्यकालीन भारतीय द्रविड़ कुल की आधुनिक अवभाशाओं में उपनिशद्ध होकर समूचे उपमहाद्वीप में फैल गया, यही यह प्रभाव है कि अहिंसा के आधुनिक राजनीतिक सिद्धान्त में विचार, वचन और कर्मो में भी देखा जा सकता है।

परन्तु जिस ढंग से ये महान धार्मिक सिद्धान्त जन साधारण तक पहुँचाये गये, वह इस आरम्भिक मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा साहित्य की विशिष्ट विलक्षणता ही प्रतीत होती है। नीति, कथाएं, दृष्टान्त और कहानियाँ प्रत्येक सिद्धान्त को सुविवेचित तर्कशास्त्रीय युक्तियों की अपेक्षा अधिक उत्तम रीति से और कहीं विषद प्रकार से स्पष्ट करती है।

भरहुत के अत्यन्त महत्वपूर्ण साक्ष्य से यह प्रमाणित हो जाता है कि ये नीति कथाएं पहले से ही एक बहुत बड़ी जीवित षक्ति के रूप में बौद्ध साहित्य में अपना स्थान बना चुकी थी। अब प्रश्न यह भी उठता है कि क्या प्राकृत नीति–कथा साहित्य 'पंचतंत्र' और उस प्रकार की अन्य रचनाओं का अग्रदूत है। यह स्पष्ट है कि 'पंचतंत्र' (उसका मूल जो हो) कहीं अधिक विकसित रूपवाला है फलतः पालि जातक कथाओं में उपनिबद्ध सरल नीति–कथा साहित्य उसका समकालीन नहीं हो सकता। दूसरी ओर ये नीति–कथाएं लम्बे अरसे तक अपने अस्तित्व को बनाये रही क्योंकि 'धम्म पद' अठकथा में उनकी विषद व्याख्या देखने में आती है। परिणामतः पालि–साहित्य, नीति कथाओं में अत्यन्त समृद्ध ठहरता है और इस प्रकार के साहित्य के विकास में उनका सुस्पष्ट और निश्चित योगदान है तथा विश्व नीति–कथा साहित्य का भी आधार कहा जा सकता है।

ये नीति–कथाएं समस्त बौद्ध, पालि, वाड्मय और जैन निजुक्तियों में बिखरी पड़ी है। जातक ग्रन्थ विशेष रूप से भारतीय साहित्य पर परवर्ती मध्य भारतीय आर्य भाषा के योगदान का ठेठ नमूना प्रस्तुत करते है। इसकी अर्न्तवस्तु अपने को निम्न रूपों में वर्गीकृत करती हैं –

1. नीति–कथाएं, जिनमें से अधिकांश भारतीय नीति–कथाओं की तरह नीति या सांसारिक समझदारी का उद्देश्य लेकर चलती है और कुछ नैतिक शिक्षा की प्रेरणा देती है।
2. पशु–कथाओं के साथ परियों की कहानियाँ।
3. संक्षिप्त चुटकुले, हास्य–परिहास्यकरक कथाएं जिनमें धार्मिकता का स्पर्ष नहीं है।
4. साहसिक कार्यो से पूर्ण उपन्यास तथा लम्बी प्रेम–कथाएं।
5. नैतिक–विवरण।
6. उपदेशात्मक सूक्ति–बद्ध, पद्य या उक्ति।
7. धर्मपरक आख्यान।

बौद्ध और परवर्ती हिन्दुओं की तरह जैन की अपने समस्त धार्मिक प्रवचनों को धार्मिक या ऐहलौकिक आख्यानों से अलंकृत करके देने में, आनन्द का अनुभव करते थे। ये आख्यान और नीति–कथाएं सदियों तक फैली रही, उनमें से अत्यन्त रोचक कहानियाँ स्वर्गीय प्रोफेसर याकोबी द्वारा महाराष्ट्री में 1886 में प्रकाशित अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'एरत्जैहव्युंगेन' में उद्दृत की गई है।

गीति काव्य (गाथा) सूक्तिबद्ध और उपदेशात्मक काव्य की दिशा में मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा साहित्य के द्वारा किये गये अपने प्रभावी योगदान का भी महत्व है। उदाहरणार्थ पालि, वाड्मय के प्राचीन 'सुत्तनिपात' में प्राप्त बहुत से पद्यों में प्राचीन गाथा काव्य के महत्वपूर्ण अवशेष मिलते हैं जोकि वैदिक काल के आरम्भिक काल में निश्चित रूप से बहुत लोक में प्रचलित रहे होंगे। 'धम्म पद' के वस्तुतः ऐसे शानदार पद्य है जिन्हें विश्व–साहित्य की वस्तु के रूप में सर्वत्र स्वीकृति मिल चुकी है तथा जिसके भाषान्तर अनेक भाषाओं में मिलते हैं न्यायतः प्रसिद्ध 'थेर और थेरी गाथा' में तापस–काव्य भी प्रचुरता से प्राप्त होते हैं। उनकी भाव–प्रवण शैली, मौलिक मानवानुरोध ओर कृत्रिमता के पूर्ण अभाव की उन पर वह मुहर लगती है, जो उदाहरण के तौर पर आगे चलकर मीरा, कबीर, नरसी मेहता या तुकाराम के गीतों की विशेषता बन जाती है और जिसके सार्वभौम प्रकार को नकरा नहीं जा सकता। कथा–साहित्य के क्षेत्र में भी मध्यकालीन भारतीय आर्य भाशाओं ने भारतीय वर्णनात्मक साहित्य पर सुनिश्चित छाप लगाकर अपना उत्कर्ष और बढ़ाया है। यदि एक ओर भारत के रामायण, महाभारत जैसे राष्ट्रीय महाकाव्यों ने बौद्ध और जैन साहित्य राष्ट्र की समग्र साहित्यिक सृष्टि पर जिसमें लौकिंक संस्कृत तथा उत्तरी–दक्षिणी भारत दोनों की आधुनिक देशी भाषाएं सम्मिलित है, अपना प्रभाव डाला है, तो दूसरी ओर गुणाढ्य की 'वृहत्कथा' के प्रभाव को अनिवार्य रूप से इनके बाद स्थान देना चाहिए, कारण कि यह कृति 'रामायण' और महाभारत से होड़ लेती है। इसीलिए कीथ के शब्दों में कह सकते है कि 'वृहत्कथा' का (जो कि भारतीय साहित्यिक कला का भण्डार है) मूल रूप में विलोप भारतीय साहित्य में हमारी एक गंभीर क्षति है। कहा जाता है कि यह मध्यकालीन आर्य भाषा को पैशाची बोली में लिखित थी, इसका अस्तित्व आरम्भिक साहित्यिक उल्लेखों से कम्बोडिया में एक अभिलेखीय उल्लेख (865 ई0) से और उक्त कृति के भारत में प्राप्त अनेक संस्कृत/प्राकृत पाठों से साक्ष्यांकित हो जाता है। 'वृहत्कथा' लगभग एक ऐहलौकिक कृति की ओर उसने भारतीय साहित्य में विषुद्ध रूप से स्वच्छन्द प्रेम–भावना का परिचय कराया। आल्सडोर्फ ने आरम्भिक जैन, महाराष्ट्रीय कृति 'वासुदेव हिण्डी' पर गुणाढ्य की 'वृहत्कथा' के प्रभाव चिन्ह दिखाये है।

जैनों के संस्कृत और प्राकृत दोनों में अपभ्रंष को सम्मिलित करके लिखे गये समृद्ध पौराणिक साहित्य का भी अपना महत्व है। अनेक परी–कथाओं, आख्यानों, नीति– कथाओं और परम्परागत कहानियों से लेकर वर्णनात्मक, जीवन चरितात्मक तथा अर्ध ऐतिहासिक

साहित्य में हमें उक्त क्षेत्र का विस्तार ही नहीं मिलता बल्कि पौराणिक महाकाव्य साहित्य भी उपलब्ध होता है।

जैन–पुराण संस्कृत, प्राकृत ओर अपभ्रंश में लिखे गये है। विमल सूरि का 'पउम चरिउ' इनमें से प्राचीनतम हैं। इसमें राम–कथा वर्णित है और उससे प्रसिद्ध राम–कथा का एक पाठान्तर प्रस्तुत होता है। पुष्पदंत का 'महापुराण' अपभ्रंश में लिखित है, जो संस्कृत के 'हरिवंश पुराण' के समान महान् पौराणिक ग्रन्थ है। कन्नड़, तमिल और अन्य भाषाएं इस बात का साक्ष्य प्रस्तुत करती है कि जैन शिक्षकों में अपने धार्मिक सिद्धान्तों का प्रचार करने के लिए अधिक से अधिक लोगों के पास पहुँचने की लगातार इच्छा बढ़ रही थी। इस प्रकार साहित्यिक माध्यम के रूप में मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाको सुरक्षित रखने तथा सही जन भाषाओं को विकसित करने की दिशा में बड़ा से बड़ा योगदान जैनों के द्वारा हुआ है।

जैनों का एक विषिश्ट योगदान जो कि वर्णनात्क साहित्य के क्षेत्र में हुआ है, वह है उनका धार्मिक उपन्यास 'धम्म कथा' इसका साक्ष्य पादलिप्त (पालित्त) सूरि की 'तरंगवती' प्रकट करता है। इसके अतिरिक्त धणपाल द्वारा अपभ्रंष में लिखित प्रसिद्ध 'भविष्यत्त कहा' या 'मलय सुन्दरी कथा' है, जिसमें किसी अविदित कवि ने परी कथाओं की लोक प्रचलित विषयवस्तु को उसी प्रकृति के प्रेमाख्यानक जैन महाकाव्य के रूप में प्रस्तुत किया प्रतीत होता है।

मध्यकालीन इन आर्य भाषाओं में संगीत, नृत्य, वाद्य के अतिरिक्त नाट्यकला तथा लोककला के रूप में संगीत का स्थान प्रमुख ठहरता है। भरत मुनि का 'नाट्यशास्त्र' इसका प्रमुख उदाहरण हैं उसमें प्राकृत भाशाओं का भी एक विभाग है। पालि ने तो कुछ अलंकार ग्रन्थों पर संस्कृत का अंधानुकरण किया है। ताल–मात्रा और छंदों का भी उल्लेख मिलता है।

दार्शनिक सम्प्रत्यय के क्षेत्र में तो मध्यकालीन भारतीय आर्य साहित्य संस्कृत में लिखित कहीं अधिक गंभीर ग्रन्थों की अपेक्षा घटिया रहा है। वृहद् धार्मिक सक्रियता जो गौतमबुद्ध और महावीर की शिक्षाओं में चरमोत्कर्ष पर पहुँची थी, ब्राह्मण सम्प्रदायों द्वारा नई छानबीन का साथ ही साथ प्रवर्तन किया और क्रमषः सिद्धान्त प्रभावित किया। मानव मस्तिष्क की मानसिक क्षमता तथा विचार शक्ति पर अत्यधिक निर्भरता से बचते हुए बौद्ध सिद्धान्तों ने उदाहरण के तौर पर बार–बार व्यवहारिक अनुभूति पर बल दिया है।

मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाओं ने अनेक ऐहलौकिंक तथा वैज्ञानिक पक्षों को स्पर्श किया है। यथा, नालन्दा और तक्षशिला के विश्वविद्यालयों में सैकड़ों वर्शो तक आयुर्वेद, दर्शन और धर्म–विज्ञान के साथ–साथ ऐहिक ज्ञान की समस्त शाखाएं विकसित होती रही। एजगर्टन की 'मिश्र बौद्ध–संस्कृत' या अन्य विद्वानों की 'संकर संस्कृत', इनमें से अधिकांशतः का अनुवाद तिब्बती और चीनी भाषा में हुआ और खेतान तथा अन्यत्र उपलब्ध पाण्डु लिपियों के अन्वेषों में अनेक 'चिकित्सा शास्त्रीय ग्रन्थ' खोज में आए है। इनमे से अनेक 'मिश्रित संस्कृत' ग्रन्थों के तोखारी या मध्य ईरानी पाठान्तर है।

जैनों ने वर्गीकरण की असाधारण सहज प्रवृति के साथ अपना पूरा ध्यान चिकित्सा षास्त्र की विभिन्न षाखाओं और सामान्यतः चिकित्सा ज्ञान की दिषा में लगाया। उदाहरणार्थ उनके ग्रन्थ 'तण्डुलवेयालियपहण्षा' को लिया जा सकता है, जिसमें महावीर और गौतम के बीच गद्य और पद्य में मिश्रित संवाद चलता है जिसमें शरीर क्रिया–विज्ञान और शरीर रचना–विज्ञान, भ्रूण जीवन, मनुष्य की दस अवस्थाएं, अस्थियों की संख्या आदि पर सामान्य विवरण मिलता है।

जैन वाड्मय में विशेष रूप से खगोल–विज्ञान और फलित–ज्योतिष के क्षेत्र में हमें समृद्ध साहित्य उपलब्ध होता है। इस वाड्मय के पाँचवे, छठे और सातवें उवंशों में खगोल–विज्ञान, भूगोल, ब्रह्मण्ड–विज्ञान और काल–विभाग पर वर्णन मिलते है।

सभंवतः विद्वानों को यह जानकारी भी रोचक लगे कि इन दिशाओं में ज्ञानरत पालि ओर अर्धमागधी वाड्मय में छिपे पड़े है।उदाहरणार्थ, पालि वाड्मय के 'अंगुत्तरनिकाय' में आनन्द बुद्ध की शक्ति के सम्बन्ध में उनसे प्रश्न करता है, बुद्ध के प्रकाश को किस सीमा तक विश्व में देखा जा सकता है और बुद्ध की वाणी को कहां तक सुना जा सकता है। यदि यह परी जैसा संवाद सही रूप में प्रस्तुत किया जा सके और गणितीय समस्या की तरह इसका परीक्षण किया जाए, इससे त्रि–आयामात्मक विश्व की सीमा के संबंध में सामने रखा है। इसे तो भविष्य के शोध और अनेक उस प्रकार की सदृश उपलब्धियाँ ही प्रमाणित कर सकती हैं।

उद्देश्य

इस शोध पत्र का उद्देश्य मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा साहित्य का कला एवं विज्ञान की दिशा में योगदान पर प्रकाश डालना है।

निष्कर्ष

इस प्रकार, मध्यकालीन भारतीय आर्य भाशाओं ने जिस सम्य जीवन के निर्माण में कुछ योगदान दिया है उसके विभिन्न पक्षों की स्थूल रूपरेखा यहाँ प्रस्तुत है लेकिन ईसा पूर्व 500 शताब्दी से लेकर लगभग 1000 ई0 शताब्दी तक कला, साहित्य, विज्ञान की दिशा में तथा भारत के जीवन को समृद्ध बनाने में प्राकृत भाषाओं ने जो विविध योगदान किया है, उक्त विवरण से स्पष्ट होगा तथा एशिया में बौद्धों के प्रसार–प्रचार के परिणामस्वरूप यह सांस्कृतिक विरासत चीन, तिब्बत और अन्य मध्य एशियाई देशों तक फैल गई तथा यूरोपीय और अमेरिकी राष्ट्रों पर बुद्ध धर्म का प्रभाव अवलोकनीय है। इस अध्ययन ने विद्वानों की दो पीढ़ियों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया है

1. अनेक नई भाषाएं प्रकाश में आई,
2. विलुप्त शब्द प्रकाशित हुए,
3. ज्ञान का भौगोलिक क्षेत्र बढ़ा आदि।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. ब्राह्मण – साहित्य
2. सम्पूर्ण जैन – साहित्य
3. पालि – साहित्य
4. अपभ्रंश – साहित्य
5. धम्मपद

6. वृहत्कथा – अंश गुणाढ्य
7. दशकुमार चरितः दण्डी
8. हर्ष चरितम् – बाणभट्ट
9. कादम्बरी – बाणभट्ट
10. पउम चरिउः विमल सूरि
11. सनत्कुमार चरितम्ः संपादित – 'याकोबी'
12. वृहत् नेमिनाह चरिउः हरिभद् (1159ई0)
13. सुपासनाह चरियम्ः लक्ष्मण गणिन् (1142ई0)
14. महापुराणः पुष्पदन्त
15. व्येर और व्येरी गाथा
16. 'भविसयत्त कहा' – धणपाल
17. मलपसुन्दरी कथा – अविदित कवि
18. नाट्यशास्त्रः भरतमुनि
19. अंगुत्तर निकाय
20. महाभाष्य : पतंजलि
21. प्राचीन भारत : मजूमदार
22. प्राचीन भारत : आर0 के0 मुकर्जी
23. संस्कृत–भाषा–विज्ञान : द्विवेदी, डा0 पारसनाथ
24. प्राकृत–हिन्दी–शब्दकोश
25. वाल्मीकीय रामायण भाग–1–2
26. कर्पूर मन्जरी
27. प्राकृत–भाषा–विमर्ष
28. प्राकृत–भाषा–पिषेल
29. जातक–कथा
30. गडड़वहो : वाक्पतिराज
31. वज्जालग्ग : जयवल्लभ
32. भाषा–विज्ञान – भोलानाथ तिवारी